शेखावाटी में सामंत व्यवस्था एवं राजतंत्र प्रणाली

डॉ0 पूनम शर्मा, सहायक आचार्य, इतिहास, एस.के.एस. कन्या कॉलेज, सीकर।

प्रस्तावित शोध की परिचयात्मक भूमिका

सीकर ठिकाने की सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सामन्त वर्ग सदैव ही सर्वोपरि रहा है। सामन्तो का आर्विभाव लगभग यहाँ 1000 वर्ष पूर्व हुआ। यह शासक के ही कुल के वंशज या अन्य राजपूत कुल के वंशज उनके ही सगे–सम्बन्धी, साथी व सहयोगी हुआ करते थे। राजपूत शासक अपने सैनिक अभियानों को सुचारू रूप से चलाने के लिए ही इन्हें अपनी जागीर का कुछ भाग दे देते थे। सामन्तों को दी गई भूमि या गाँवों पर सामन्तों का नियन्त्रण रहता था लेकिन शासन प्रबंध शासक का ही रहता था। इस कारण सामन्तों के गाँवों के लोगों पर दोहरा शासन बना रहता था। इन सामन्तों के गाँव जागीर के गाँव कहलाते थे। इन सामन्तों को आवश्यकतानुसार शासको को सैनिक या आर्थिक सहायता देनी पडती थी। इस प्रकार सामन्तवाद का उदय होने से शासक को यह लाभ हुआ कि उन्हें राज्यों के लिए एक स्थायी व बड़ी सेना नहीं रखनी पड़ती थी। जब भी शासक को सेना की आवश्यकता होती वह अपने सामन्तों को आदेश भेज देता और तत्काल सभी सामन्त अपनी सेना लेकर एकत्रित हो जाते थे। मध्यकाल में मुगल साम्राज्य के उदय के कारण राजपूत शासकों को सैनिक अभियानों के लिए सामन्तों की सहायता की आवश्यकता अधिक पड़ने के कारण ही मध्यकाल में सामन्तवाद पूर्णतया सुदृढ हो गया।

सामन्तों द्वारा शासक को आर्थिक लाभ के रूप में नजराना, हुकमनामा, रेख, चाकरी, खडगबन्दी, मातमी, मतालया तथा राजकुमार व राजकुमारी के विवाह पर भेंट आदि देने से राजा व राज्य को अच्छी आय प्राप्त हो जाती थी। उत्तराधिकारी न होने पर या कोई संगीन अपराध करने पर सामन्त की जागीर भी शासकों द्वारा अपने अधीन कर ली जाती थी इस प्रकार राजा का सामन्तों पर पूर्णतया नियन्त्रण रहता था।

(1) सामन्त व्यवस्था से तात्पर्य

यहाँ की सामन्त व्यवस्था एक प्रकार से सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था का ही रूप थी, जिसमें नेता के रूप में राजा होता था और उसके साथ उसके ही कुल के वंशज उसके साथी व सहयोगी के रूप में रहते थे। वस्तुतः शेखावाटी में सामन्त व्यवस्था राजतंत्र–प्रणाली का ही प्रतिफल थी। लगभग सभी राज्यों के संगठन में कुलीय भावना की प्रधानता रहती थी। शासक अपने भाइयों, सगे–सम्बन्धियों को जीवन–यापन के लिए अपने ही राज्य में से कुछ भूमि जागीर के रूप में दे दी जाती थी, उस जागीर पर सामन्तों का वंशानुगत अधिकार होता था और वे अपने आपको राजा के समकक्ष मानते थे। जागीरें प्राप्त करने वाले ये राजपूत ही 'सामन्त' कहलाते थे।

राजपूत राजाओं की विजय या पराजय होने पर सामन्तों को और अधिक भूमि प्राप्त भी हो सकती थी या उसकी भूमि से उसका अधिकार हटा दिया जाता था। इसके अलावा एक राज्य में अन्य कुल के राजपूत भी सामन्त बन सकते थे। शासक और सामन्तों के बीच भाइचारे का संबंध होता था और इसी कारण सामन्तों की स्थिति बराबर वालों में प्रथम के समान होती थी। सीकर ठिकाने में यह सामन्त–व्यवस्था स्वतंत्रता–प्राप्ति के कुछ समय तक बनी रही।

(2) सामन्त व्यवस्था का स्वरूप

सीकर ठिकाने के सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में सामन्त प्रथा का अपना एक विशेष एवं महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सामन्त वर्ग का उदभव लगभग 1000 वर्ष पूर्व राजपूत राज्यों की स्थापना के साथ ही हो गया था क्योकि यह प्रथा राजपूत राज्यों की सैनिक व्यवस्था और संगठन के साथ जुड़ी हुई थी।

राजपूताने में राजपूतों के विभिन्न कुलों ने ज्यों–ज्यों अपने–अपने राज्यों की स्थापना की, उसके साथ ही अपने राज्य में व्यवस्था बनाए रखने तथा बाह्य आक्रमणों से राज्य की सीमाओ को सुरक्षित रखने के लिए राजपूत शासकों ने अपने परिवारजनों, सेनानायकों एवं अधीनस्थों को जागीरे देकर अपना सामन्त बना लिया।

जैसे–जैसे राज्यों का विस्तार होता गया, सामन्तों की जागीरों में भी वृद्धि होती गई तथा नए सामन्तों की संख्या में वृद्धि होती गई। लेकिन अधिकांश जागीरों पर राज्य कुल से सम्बन्धित सामन्तों का ही अधिकार होता था। वे अपने आपको शासक का सामन्त मात्र ही नहीं अपितु शासक का सगोत्री, बंधु और संबंधी समझते थे। तथा शासक के घरेलू और राजनैतिक मामलों में सामाजिक समानता का

दावा करते थे। सीकर ठिकाने में शासक अपने सामन्तों को काकाजी और भाईजी जैसे आदरसूचक शब्दों से सम्बोधित करते थे। इसी प्रकार सामन्त भी अपने शासक को 'बापजी' कहकर संबोधित करते थे क्योंकि राजा उनके वंश का मुखिया था और वह कुल का प्रतिनिधित्व करता था।

तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में सामन्तों की इच्छा के विपरीत शासक के लिए कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय लेना समय नहीं होता था। यहाँ की सामन्त व्यवस्था के सिद्धान्तों की व्याख्या करते हुए कर्नल टॉड ने कहा है कि– 'सामन्त व्यवस्था का मूल सिद्धान्त यह है कि राजा आश्रय दें तथा सामन्त अपने राजा के प्रति निर्धारित कर्तव्यों का पालन करें। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत यह व्यवस्था एक और सामन्तों को अपने स्वामी को दी जाने वाली सेवाओं के लिए बाध्य करती है, तो दूसरी ओर राजा पर, अपने सामन्तों की सुरक्षा का दायित्व भी आ जाता है। यदि यह सिद्धान्त दोनों पक्षों की ओर से भंग हो जाता है तो एक पक्ष अपनी भूमि खो देता है तथा दूसरा पक्ष अपने प्रभुत्व एवं अधिकार खो देता है। यहाँ सीकर के सामन्त वर्गों के अधिकार, विशेषाधिकार और कर्तव्य सहयोग और निष्ठा के सिद्धान्त पर आधारित थे।''

(3) सामन्तों से प्राप्त सेवाएँ एवं शुल्क

यहाँ की सामन्त व्यवस्था के अन्तर्गत सामन्तों के अपने शासकों के प्रति कुछ कर्तव्य निर्धारित थे, जिनका पालन करना सामन्तों के लिए अनिवार्य था। सामन्तों से शासक कुछ महत्वपूर्ण सेवाएं लेते थे, जो निम्नलिखित थी –

(क) सैनिक सेवा/चाकरी (ख) रेख (ग) मतालबा

(क) सैनिक सेवा/चाकरी : सैनिक सेवा, शासकों औ सामन्तों के आपसी सम्बन्धों की मुख्य कड़ी थी। सामन्तों का सबसे महत्पूर्ण कर्त्तव्य अपने शासकों को सैनिक सेवा प्रदान करना था जिसे 'चाकरी' कहा जाता था। सामन्तों द्वारा राज्य को दी जाने वाली सैनिक सेवा को मुख्य रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है :

1. युद्धकालीन सेवा 2. शान्तिकालीन सेवा

1. युद्धकालीन सेवा – जब शासक किसी शत्रु से युद्ध करने हेतु युद्ध क्षेत्र में उपस्थित होता तो शासक का खास रूकका प्राप्त कर सभी सामन्त अपनी सेना सहित शासक की सेवा में उपस्थित हो जाते थे। जो सामन्त बीमारी अथवा अन्य किसी कारण से स्वयं चाकरी हेतु उपस्थित होने में असमर्थ होते, तो उन्हें इसकी सूचना शासक को देनी पड़ती थी तथा अपनी सेना को शासक की सेवा में भेजना पड़ता था। किन्तु कभी–कभी सामन्तों द्वारा राज्यद्रोह करने पर, उपद्रव करने पर अथवा अभिमानवश चाकरी में उपस्थित नहीं होने पर भारी अर्थ दण्ड दिया जाता था, जिससे सारी जागीर अथवा जागीर का कुछ भाग जब्त कर लिया जाता था।

2. शान्तिकालीन सेवा : शांति काल में भी सामन्तों को वर्ष में एक बार निश्चित अवधि के लिए अपनी निश्चित सेना के साथ शासक की सेवा में उपस्थित होना पड़ता था। सामन्तों की सेना की संख्या उनकी जागीर के पट्टे में दर्ज 'रेख' पर आधारित होती थी। चाकरी की निश्चित अवधि समाप्त होने पर उच्च वर्ग के कुछ सामन्त कुछ समय के लिए राजधानी में रहते तथा शासक की अनुमति प्राप्त करके ही सामन्त अपनी जागीर में जा सकते थे।

(ख) रेख सामन्तो से राजकीय मामों का हिसाब श्रेख के आधार पर किया जाता था। रेख के दो अर्थ देखने में आते थे। एक अर्थ में रेख का अभिप्राय गांव की उस अनुमानित वार्षिक आय से था जो कि शासकों द्वारा दिए गए जागीर के पट्टे में दर्ज होती थी, दूसरे अर्थ में रेख का अभिप्राय उस सैनिक कर से था जो कि राठौड़ राज्यों जोधपुर, बीकानेर और किशनगढ़ में सैनिक सेवा के अलावा सामन्तों से लिया जाता था।

वस्तुतः रेख वह मापदण्ड था जिसके आधार पर जागीरदारों से राजकीय मागों, जैसे उत्तराधिकार शुल्क, सैनिक सेवा न्योता शुल्क आदि का हिसाब–किताब लिया जाता था। तथा आगे चलकर यही रेख शासकों एवं सामन्तों के आपसी विवाद का कारण बनी, क्योंकि पट्टों में दर्ज रेख के अनुमानित आकडों और गाँव की वास्तविक आय में काफी अंतर था।

(ग) मतालबा : इसे सर्वप्रथम 1755 ई. में महाराजा विजय सिंह द्वारा लागू किया गया था इन्होंने सामन्ती घर, शाही जजिये और बाहर के युद्धों में भाग लेने की सेवा के बदले में एक हजार की आमदनी पर तीन सौ रूपयों के हिसाब से मतालबा नामक कर लगाया गया। चूंकि यह कर जागीर की आय अर्थात् रेख के हिसाब से लिया जाता था। इस लिए इसका नाम भी 'रेख' पड गया। उपरोक्त

सामन्तों से ली जाने वाली सेवाएं थी। इसके अलावा सामन्ती से कुछ शुल्क भी वसूल किये जाते थे जो कि निम्नांकित है।

1. उत्तराधिकार शुल्क
2. पेशकशी शुल्क
3. तागीरात शुल्क
4. नजराना शुल्क
5. राजा के राज्याभिषेक के अवसर पर नजराना
6. राजा और ज्येष्ठ पुत्र के विवाह के अवसर पर नजराना
7. राजाओं की तीर्थ–यात्राओं पर नजराना
8. न्योता

परिचयात्मक शोध का महत्त्व

भारमल के समय से ही जागीरों को कोटड़ी कहा जाता था। जयपुर राज्य में राजपूत जागीरदार ठाकुर कहलाते थे। उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक सामन्त लोग अपनी–अपनी जागीरों में स्वतंत्र शासक की तरह शासन करते थे। बड़े सामन्तों के अपने दरबार थे। अपने अधिकारी, कर्मचारी और स्वयं के सैनिक दस्ते थे। अपनी–अपनी जागीरों में शान्ति और व्यवस्था को बनाए रखने तथा आन्तरिक उपद्रवों को दबाने की जिम्मदारी भी स्वयं की ही थी। बड़े सामन्तों को शासक द्वारा मृत्यु – दण्ड के अलावा सभी प्रकार की सजाए देने का अधिकार था। व्यापारियों तथा दुकानदारों की सुरक्षा के बदले में इन्हें उनसे कई प्रकार के शुल्क वसूल करने का अधिकार प्राप्त था। इस प्रकार सामन्तो को अपने–अपने क्षेत्रों में पर्याप्त अधिकार प्राप्त थे जिसके परिणामस्वरूप अपनी प्रजा पर उनका पर्याप्त नियन्त्रण था।

(1) **खास–रूकका** – यह शासक द्वारा प्रदत सामन्तों का खास विशेषाधिकार होता था। यह प्रथम श्रेणी के सामन्तों को ही दिया जाता था। यह सामन्त शासक द्वारा खास रुकका मिलने पर ही राज दरबार में उपस्थित होते थे तथा शासक को इनका इनकी श्रेणी और पद की मर्यादा के अनुसार इनका सम्मान करना पड़ता था और जब यह अपनी जागीरों को वापस लोटते तो शासक को इन्हें सिरोपाव देकर विदा करना पड़ता था।'

(2) **सिरोपाव** – शासक के राज्याभिषेक, राजघराने में विवाह, युवराज के जन्म आदि अवसरों पर शासक से सिरोपाव प्राप्त करना, सामन्तों का विशेषाधिकार था।

(3) **लवाजमा** – अपनी श्रेणी, पद व मर्यादानुसार सामन्तो को अपने शासक से नककारा निशान, सोने–चांदी की छड़ी, चंवर–चंबरी, चपरासी रखने तथा पावो में सोने के लंगर और अपने ठिकानों में घड़ियाल बजाने का विशेषाधिकार प्राप्त था जिसे 'लवाजमा' कहा जाता था।

(4) **मातमी** – यह एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ है, राजा द्वारा उत्तराधिकारी को मान्यता प्रदान किया जाना। किसी ताजीमी जागीरदार की मृत्यु होने पर राजा उनके राजधानी स्थित आवास पर स्वयं जाकर उसके उत्तराधिकारी को मान्यता प्रदान करता था। इसे ही 'मातमी' होना कहते थे। इसके अन्तर्गत शासक द्वारा सामन्त की पद व मर्यादा के अनुसार सिरोपाव व घोड़े दिये जाते थे। 'मातमी' हुए बिना उत्तराधिकार वैध नहीं माना जाता था ऐसा व्यक्ति मातमी न होने पर दरबार में उपस्थित होने का अधिकारी नहीं माना जाता था।

(5) **ताजीम** – इस विशेषाधिकार के अन्तर्गत जब कोई सामन्त दरबार में उपस्थित होता तो स्वयं राजपूत शासक उसके सम्मान में खड़े होते थे इस प्रक्रिया को ही 'ताजीम' कहते थे। प्रथम व द्वितीय श्रेणी के सामन्तों को 'ताजीम' प्रदान की जाती थी।

(6) **बाह–पसाव** – किसी सामन्त के दरबार में उपस्थित होने पर शासक के खड़े होने पर सामन्त अपनी तलवार को शासक के समक्ष रखता था तथा झुककर शासक की अचकन को छूता था। तब शासक इस अभिवादन को स्वीकार करते हुए अपने हाथ उस सामन्त के कंधों पर रख देता था। इस प्रक्रिया को 'बाह–पसाव' कहते थे। प्रथम श्रेणी के सभी उमरावों को 'बाह–पसाव' का विशेषाधिकार प्राप्त था। इस प्रकार अभिवादन करने के पश्चात् वह सामन्त अपने निश्चित स्थान पर बैठ जाता था।

(5) **अन्य विशेषाधिकार** – सीकर ठिकाने के सामन्तों को कुछ अन्य विशेषाधिकार भी मिले हुए थे। कुछ राज्यों के प्रमुख सामन्तों को अपना सिक्का ढालने का विशेषाधिकार भी मिला हुआ था। कुछ सामन्तों को शराब की भट्टियां चलाने का भी विशेषाधिकार मिला हुआ था। कुछ ताजीन का विशेषाधिकार प्राप्त सामन्त तथा उनकी ठकुरानिया ही पैरों में स्वर्णाभूषण पहन कर राजप्रसाद में आ सकती थी। कुछ सामन्तों को अपना नगाड़ा बजाते हुए प्रसाद के किसी द्वार तक आने का विशेषाधिकार

प्राप्त था। कहीं–कहीं पर शासक की सालगिरह पर शासक का अपने सामन्तों के साथ एक ही पंगत में भोजन करना उनके प्रति सम्मान का ज्ञापक समझा जाता था।

इस प्रकार सामन्त वर्ग अपने आपको अपने कुलीय राज्यों के संरक्षक और राजा का सलाहकार समझते थे और यह आशा रखते थे कि राजा राज्य की महत्वपूर्ण समस्याओं पर उनसे विचार–विमर्श किया करे। इसे सामन्त लोग अपनी प्रतिष्ठा की बात मानते थे। इसी प्रकार राज्य का शासक बनने के लिए ज्येष्ठ पुत्र होना ही पर्याप्त नहीं था, कुलीय सामन्तों की स्वीकृति भी आवश्यक थी।

प्रस्तावित शोध के सोपान

सामन्त प्रथा में अनेक दोष विधमान थे जिसके कारण राज्य को हानि उठानी पडती थी। सामन्त प्रथा का सबसे बड़ा दोष तो यह था कि राज्य में राजा यद्यपि सर्वोच्च अधिकारी होता था, लेकिन प्रत्येक प्रशासनिक कार्य मे राजा को अपने सामन्तों पर आश्रित होना पडता था। राजा के पास स्वयं की कोई सेना न होने के कारण राज्य की सुरक्षा के लिए भी सामन्तों की सैनिक सहायता पर निर्भर रहना पडता था। सामन्तों के सैनिक केवल अपने सामन्तो के नेतृत्व में ही युद्ध में भाग लेते थे। अतः सभी सामन्तों की सेनाओं में न तो एकता रहती और न ही समन्वय रहता था।

शासक द्वारा सामन्त की किसी बात का विरोध करने पर ही सामन्त शासक के शत्रु बन कर मुगल सम्राट से मित्रता स्थापित कर लेते थे। मुगल काल के पतन के काल मे लगभग प्रत्येक राज्य में शासक और सामन्त के बीच झगड़े आरम्भ हो चुके थे। तथा राजपूत शासकों द्वारा बिट्रिश संरक्षण स्वीकार करने का एक कारण यह भी था कि शासक बिट्रिश सहयोग से अपने सामन्तों को नियन्त्रित करना चाहते थे। अधिकांश सामन्त वर्ग ने न केवल राजाओं को बल्कि अपनी जनता को भी परेशान करने में कोई कमी नहीं छोड़ी। राज्य की अधिकांश भूमि सामन्तों में और तत्पश्चात् सामन्त के पुत्रों में बंट जाती थी। अधिकांश सामन्त अपनी जागीर में छोटे राजा बन गये थे उनके अपने दरबार, कर्मचारी, अधिकारी व सैनिक होते थे।

सामन्त वर्ग अपनी प्रजा से भी अत्यधिक मनमानी करते थे। बदलते हुए समय के साथ–साथ सामन्तों को जब–जब धन की आवश्यकता होती, वह किसानों पर अतिरिक्त लाग–बाग (कर) लगा देते तथा किसानों से मुफ्त बेगार लिया करते थे। इन लाग–बाग के कारण ही आगे चलकर किसानों ने आंदोलन शुरू किया। तथा किसान आंदोलन ने ही सामन्त प्रथा के उन्मूलन की पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। सामन्तों में परम्परागत समानता की भावना समाप्त हो गई थी तथा राजपूत राज्यों में धीरे–धीरे सामन्त व्यवस्था लुप्त प्रायः होने लगी।

प्रस्तावित शोध के उद्देश्य

यहां सामन्त प्रथा का उदभव ही इस विश्वास के साथ हुआ था कि वे राज्यों की सुरक्षा के लिए शासकों की सहायता करेंगे तथा राज्य के प्रशासन को सुचारू रूप से संचालित करने में सहयोग करेंगे। सामन्त वर्ग के कारण ही शासक न केवल अपने राज्य के अस्तित्व को बनाए रख सके, बल्कि समय–समय पर अपने राज्य का विस्तार करने में भी सफल रहे। राजा के पास अपनी स्वयं की कोई सेना नहीं होती थी, अतः आवश्यकता पड़ने पर राज्य के सभी सामन्त ही अपनी सेना लेकर शासक की सेवा में उपस्थित होते थे। तथा राज्य के संरक्षण में अपना पूरा सहयोग करते थे।

जिस प्रकार राजा का कर्तव्य अपनी प्रजा का पोषण करना तथा राज्य की रक्षा करना था, उसी प्रकार सामन्तों का कर्तव्य राज्य की सुरक्षा में शासक को सहयोग देना था। तथा सामन्त वर्ग अपनी–अपनी जागीर से भूमि कर वसूल करते थे और निर्धारित रकम राजकोष में जमा करवा देते थे। इस प्रकार पूरे राज्य से भूमि–कर की वसूली बहुत आसानी से हो जाती थी। तत्कालीन समाज में राज्य का शासक बनने के लिए ज्येष्ठ पुत्र का होना ही पर्याप्त नहीं था, अपितु कुलीय सामन्तो की स्वीकृति भी आवश्यक थी। इस प्रकार राज्य की निरकुंशता पर सामन्तों का नियन्त्रण होता था। सामन्तों की शक्ति ही शासकों की शक्ति होती थी अतः सामन्त प्रथा ही शासकों को शक्ति–सम्पन्न बनाये रखने में सहायक सिद्ध हुई।

प्रस्तावित शोध का निष्कर्ष

अठारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में मुगलों की केन्द्रीय शक्ति के पतन के पश्चात् राजपूत राजाओ को पुनः अपने सामन्तों की सहायता और सहयोग पर निर्भर हो जाना पड़ा। जिसके परिणामस्वरूप राजपूत राज्यों को मराठा और पठानों की लूट–खसोट का शिकार होना पड़ा। इसके बाद राजपूत राजाओं ने बिट्रिश संरक्षण स्वीकार कर लिया। अधिकांश सामन्त वर्ग इसके विरुद्ध थे क्योंकि उन्हें भय था कि

कहीं उन्हें भी (सामन्तों) इसकी कीमत नहीं चुकानी पड़े और दीर्घकालीन परम्पराओं से प्राप्त अपने विशेषाधिकारों से वंचित न होना पड़े।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सामाजिक व्यवस्था में तेजी से परिवर्तन आने लगा। समाज का नेतृत्व करने वाले तथा राज्य की सुरक्षा और विस्तार करने वाले राजपूत सामन्त शिक्षित परिवारों की तुलना में पिछड़ने लगे। सामन्तों की आय के साधन भी सीमित होते चले गए। अतः स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ समय बाद ही राजस्थान सरकार में सीकर का विलेय हो गया तथा राजस्थान राज्य सरकार की ओर से जागीरदारी उन्मूलन कानून लागू करने पर जागीरदारी प्रथा अर्थात् सामन्त प्रथा व सामन्त वर्ग का अस्तित्व ही समाप्त हो गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सवाई जयसिंह चरित्र, कवि आत्माराम, महाराजा सवाई मानसिह (द्वि) संग्रहालय, जयपुर, 1979 ई.।
2. पद्माकार श्री औरंगाबाद 1959 ।
3. जयपुर की संस्कृत साहित्य की देन, डॉ0 प्रभाकर शास्त्री, पब्लीकेशन स्कीम, जयपुर, 1980 ।
4. अली, अथर एम. औरगजेबकलीन मुगल अमीर वर्ग, राधाकिशन प्रकाशन, 1977
5. आसोपा, पं. रामकरण वंशभास्कर, सूर्यमल्ल, मिश्रण, जोधपुर।
6. कछावा री वशांवली, डॉ0 रत्नावृत के संग्रह में।